जैन आगम साहित्य में नारी का स्वरूप

• *महासती श्री उदितप्रभा 'उषा'*

महर्षि रमण का कहना है "पति के लिए चरित्र, संतान के लिये ममता, समाज के लिये शील, विश्व के लिये दया, तथा जीव मात्र के लिये करुणा संजोने वाली महाप्रकृति का नाम ही नारी है।"

वह तप, त्याग, प्रेम और करूणा की प्रतिमूर्ति है। उसकी तुलना एक ऐसी सलिला से की जा सकती हैं, जो अनेक विषम मार्गों पर विजयश्री प्राप्त करते हुए, सुदूर प्रान्तों में प्रवाहित होते हुए संख्यातीत आत्माओं का कल्याण करती है। उसमें पृथ्वी के समान सहनशीलता, आकाश के समान चिन्तन की गहराई और सागर के समान कल्मष को आत्मसात कर पावन करने की क्षमता विद्यमान है।

नारी की तुलना भूले भटके प्राणियों का पथ प्रदर्शित करने वाले प्रकाश स्तम्भ से की जा सकती हैं। उसके जीवन में राहों की धूल भी है, वैराग्य का चन्दन भी है और राग का गुलाल भी है। वह कभी दुर्गा बनकर क्रान्ति की अग्नि प्रज्ज्वलित करती है तो कभी लक्ष्मी बनकर करूणा की बरसात। न+अरि अर्थात् जो किसी की शत्रु नहीं उसके वात्सल्यमय आंचल में शिशु के समान अखिल विश्व पल्लवित होता है। अत: यदि उसे जगन्माता की संज्ञा से अभिहित किया जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

हमारे देश में प्राचीन काल से ही नारी का स्थान गरिमामय रहा है। **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता"** जहां पर नारियों की पूजा और सम्मान होता है, वहां देवता निवास करते है। **इयं वेदिः भुवनस्य नाभिः** नारी ही संसार का केन्द्र है। इन सूत्रों में नारी के प्रति अपार आस्था, श्रद्धा और पूज्य भावना अभिव्यक्त की गई है।

कवियों ने उनकी तुलना वर्ण एवं गन्ध के फूलों की महकती मनोहारिणी माला से की हैं, जननी के रूप में वह सर्वाधिक पूज्य एवं सम्माननीय है, बहन के रूप में वह स्नेह, सौजन्य एवं प्रेरणा की प्रवाहिनी है, पत्नी भार्या, सहधर्मिणी के रूप में वह मानव के समग्र व्यक्तित्व का मित्र रूप में विकास करती है। वह एक ऐसे असीम सागर के समान है, जिसमें चिन्तन के असंख्य मोती विद्यमान है।

जैन मनीषियों ने उसके महत्व के आलोक को समझा और शब्दबद्ध किया। आगम के ज्योतिर्मय पृष्ठों में उसके आदर्शों एवं गौरवगाथाओं के अनेक चित्र विद्यमान है। जैन धर्म में नारी को बाह्य परिवेश के स्थान पर उसके आन्तरिक सौन्दर्य के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकित किया गया है। उसकी उग्र तपस्या, असीम त्याग अतुलनीय साहस, सेवा परायणता, शील सौन्दर्य, संवेदनशीलता, तितिक्षावृति के दिव्य प्रभाव का गान किया गया है। उसने अन्तर में विद्यमान अतुल जीवन शक्ति को अनुभव कर सम्मानित किया है।

जैन इतिहास में नारी माहात्म्य विषय में सर्वोत्कृष्ट पक्ष पुरुष से पहले जीवन के विकास की चरम स्थिति में पहुंचना है। उदाहरणार्थ: भगवान् ऋषभदेव के समक्ष जब माता मरूदेवी आती है, और हाथी पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बैठे-बैठे ही उनकी अन्तश्चेतना, ऊर्ध्वारोहण करने लगती है और वह वायावी भावनाओं से ऊपर उठकर शुद्ध चैतन्य में लीन हो जाती है, उसी आसन पर बैठे-बैठे वह कैवल्यज्ञान और सिद्ध गति प्राप्त कर लेती है।

जैन धर्म में तीर्थंकर का पद सर्वोच्च माना जाता है। श्वेताम्बर, परम्परानुसार मल्लि को स्त्री तीर्थंकर के रूप में स्वीकार करके यह उद्घोषित किया कि आध्यात्मिक विकास के सर्वोच्च पद की अधिकारी नारी भी हो सकती है। उसमें अनन्त शक्ति सम्पन्न आत्मा का निवास हैं। माता मरूदेवी और तीर्थंकर के दो ऐसे जाज्वल्यमान उदाहरण श्रमण संस्कृति ने प्रस्तुत किये हैं, जिनके कारण नारी के सम्बन्ध में रची गई, अनेक मिथ्या धारणाएं स्वत: ध्वस्त हो जाती है।

भगवान् ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी और सुन्दरी मानव जाति की प्रथम शिक्षिकाओं के रूप में प्रतिष्ठित हैं। जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति, आवश्यकचूर्णि व आदि पुराण आदि में इन्हें मानव सभ्यता के आदि में ज्योतिस्तम्भ माना है। ब्राह्मी ने सर्वप्रथम अक्षरज्ञान की प्रतिष्ठापना की तो सुन्दरी ने गणितज्ञान को नूतन अर्थ दिया है। प्रथम शाश्वत साहित्य के वैभव की देवी है, तो दूसरी राष्ट्र की भौतिक सम्पत्ति के हानिलाभ का सांख्य उपस्थित करती है। दोनों ने सांसारिक आकर्षणों को ताक पर रखते हुए आजन्म ब्रह्मचारिणी रहकर मानव जगत के बौद्धिक विकास की जो सेवा की है, वह स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

भगवान् ऋषभदेव ने नारी के उत्थान हेतु जिन चौंसठ कलाओं की स्थापना की है, उनमें दोनों आजन्म कुमारियाँ निष्णात थी।

नारी इस सृष्टि की प्रथम शिक्षिका है, वहीं सर्वप्रथम विश्व रूपी शिशु को न केवल अंगुली पकड़कर चलना सिखाती है, अपितु गिरकर फिर उठकर चलने का पाठ भी पढ़ाती है।

आवश्यकचूर्णि में ब्राह्मी और सुन्दरी द्वारा मुनि बाहुबलि को प्रतिबोध देने का उल्लेख है। प्रकृति से कोमल होने के कारण उसका उपदेशिका रूप विशिष्ट प्रभाव उपस्थित करता है। बाहुबलि संयम के पथ पर चलकर भी अभिमान के मद से मुक्त नहीं हुए थे। भगिनी द्वय ने उनके अभिमान को चूर कर सन्मार्ग पर प्रशस्त किया था। उनका स्वर था:-

"वीरा म्हारा गज थकी नीचे उतरो।
गज चढ्या केवली न होसी रे॥"

भगिनी द्वय का उपदेश सुन करके उनके अन्तर के द्वार खुले और अहंकार निशेष हो गया।

उत्तराध्ययन और दशवैकालिक की चूर्णि में राजमति के अडिग संकल्प और दिव्यशील का वर्णन है। यादव युग की नारी राजुल की अरिष्टनेमि के साथ सगाई हो चुकी थी, विवाह के लिए बारात आ गयी थी। सहसा तोरण पर से वर लौट गये और राजुल परित्यक्ता हो गयी। परित्यक्ता होने पर वह भी टूटी नहीं। अपितु राजमहल के वैभव को छोड़कर त्याग के पथ पर चल पड़ी। उसके संयम के सामने रैवताचल की सूनी घाटियां भी विस्मित थी। उधर रथनेमि संयम के पथ पर चलते हुए भी वासनाओं के लाल डोरों से स्वयं को मुक्त न कर सके थे। रैवताचल की अन्धकाराच्छन्न एकान्त गुफा में भीगे वस्त्रों में राजमति को देखकर वासना का सर्पदंश के लिये तैयार था। राजमति के भीगे सौन्दर्य को देखकर वह संयम के आकाश से वासना की धरती पर तड़पने लगे थे। जब राजमति ने रथनेमि को पतन के गर्त में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गिरते हुए देखा तो उसका उपहास नहीं उड़ाया अपितु अपनी पवित्र उपदेशामृत से ऐसी प्रशान्ति प्रदान की कि वासना का सर्प फिर कभी न फुंफकारा। संयम के मार्ग पर रथनेमि के भटकते कदमों को राजमति ने स्थिर किया। राजमति की अदम्य तेजस्विता स्तुत्य है। भगवान् महावीर स्वामी के शब्दों में राजुल के उपदेश से रथनेमी सत्पथ पर वैसे ही चल पड़ते हैं, जैसे उत्पथगामी मस्तहस्ती अंकुश से नियंत्रित हो जाता है। **"अंकुसेण जहाँ नागो धम्मे संपडिवाइओ"**

श्रमण संस्कृति में नारी की गरिमा आदिनाथ से महावीर युग तक अक्षुण्ण रह सकी। महावीर ने चन्दनबाला के माध्यम से उस परम्परा को एक नवीन मोड़ प्रदान किया। तदुपरान्त ही साधु और श्रावक के साथ साध्वी और श्राविका संघ की स्थापना की। साधना के पथ पर नारी ने नव कीर्तिमान स्थापित किये। पुरुषों की अपेक्षा नारियों की संख्या सदा ही बढ़कर रही। नारी ने अपने अडिग साधना द्वारा यह प्रमाणित कर दिया कि वह किसी भी दृष्टि से पुरुष से पीछे नहीं है - **"एक नहीं दो-दो मात्राएं नर से बढ़कर नारी।"** भ. महावीर के चतुर्विध संघ में कुल चौदह हजार साधु एवं छत्तीस हजार साध्वियां थी। एक लाख उनसठ हजार श्रावक और तीन लाख अठारह हजार श्राविकाएं थी। चन्दनबाला ने छत्तीस हजार आर्याओं के विराट एवं दिव्य श्रमणी संघ का नेतृत्व किया। चन्दनबाला जैन साहित्य में एक प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित है। दासत्व की जंजीरों से वह भगवान् महावीर स्वामी की अनुकम्पा से मुक्त हुई और उसने अध्यात्म पथ पर संयम की रंगोली सजायी।

वस्तुत: आर्य चन्दनबाला की कहानी भारतीय नारी के संघर्षों के सागर के उस पार जाने के अतुलनीय साहस का प्रमाण है।

मनीषियों ने आध्यात्मिक निर्देशनों की दृष्टि से चन्दनबाला को गणधर गौतम के समकक्ष माना। कल्पसूत्र इसके लिए प्रमाण-स्वरूप है, जिसमें बताया गया है कि साधु संत में सात सौ श्रमण केवल ज्ञान पाकर सिद्ध हुए है। जबकि संघ में सात सौ श्रमण केवल ज्ञान पाकर सिद्ध हुए है। जब कि श्रमणी संघ में चौदह सौ श्रमणियां सिद्ध बुद्ध मुक्त हुई। इसका यह अर्थ है कि आर्य चन्दना का शासन कितना अधिक स्वच्छ, निर्मल, सशक्त एवं सक्षम था और इसके मूल में स्वयं भगवान महावीर है, उनका तत्वज्ञान एवं धर्म शिक्षण।

श्रमण भगवान् महावीर ने नारी में विद्यमान दिव्य गुण को पहचाना और उसकी गरिमा के प्रतिष्ठापन की दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

भगवान् महावीर स्वामी के सन्देश में नारी के लिये अमृत बिन्दु छलके हैं। आध्यात्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से उसके लिये विकास के नव सोपान स्थापित किये।

साध्वी श्री सुयशा का यह कथन जैन श्रमणी के लिये सार्थक सिद्ध होता है-**"नारी न सहसा विद्रोह कर सकती है और न दब्बू बनकर ही रह सकती है। उसका अपना एक स्वाभिमान है, जिसकी कोई 'इदमित्थं' जैसी ऐकान्तिक व्याख्या नहीं हो सकती। नारी सर्वथा नवीन क्रान्ति की निर्मात्री अभिनव ब्रह्माणी है। जीवन के हर नये मोड़ पर नारी की एक अनोखी ही नवनिर्मित होती है।"**

नारी को अबला और बंदिनी कह कर उसका उपहास करने वाले को जैन शिरोमणियों ने निरून्तरित किया है। एक कवि का कथन है - "कोमल है कमजोर नहीं तुम शक्ति का नाम नारी है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सबकों जीवन देने वाली मौत भी तुझसे हारी है।" कतिपय लोगों ने नारी के महत्व को न समझ कर उस पर व्यंग्य किया है। किसी ने यह कहा- "नारी की झाई परत अंधा होत भुजंग" तो किसी ने उसकी तुलना ढोल से करते हुए कहा - "शूद्र गंवार ढोल पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी" अंग्रेजी के एक लेखक के सिर पर तो यह जादू कुछ अधिक ही चढ़कर बोला - "A dog, a wife and walrut tree more you beat them better they be"

कुछ लोगों ने नारी को विष की बेलड़ी, कलह की जड़ कहकर उसकी उपेक्षा की है। उन्होंने नारी के उज्ज्वल रूप को नहीं देखा। वह युद्ध की ज्वाला नहीं, शक्ति की अमृतवर्षा है। वह अन्धकार में प्रकाश किरण है। उसने अपने बुद्धि, चातुर्य और आत्मविश्वास से भूले भटके जीवन राहियों को सही दिशा दर्शन दिया। दुराचार के सघन अन्धकार में गुमराह बने व्यक्तियों को सदाचार की सही राह बतायी।

जैन धर्म नारी के सामाजिक महत्व से भी आंखें मूंद कर नहीं चला है। उसने सामाजिक क्षेत्र में भी नारी को पुरुष के समान महत्व दिया है। संयम के क्षेत्र में भिक्षुणियाँ ही नहीं गृहस्थ उपासिकाओं भी अनवरत् आगे बढ़ी हैं। भगवान् महावीर के प्रमुख श्रमणोपासक गृहस्थों का नामोल्लेख जहां होता है वहीं प्रमुख उपासिकाएं की भी चर्चाएं आती है। सुलसा, रेवती, जयन्ती, मृगावती जैसी नारियां महावीर के समवसरण में पुरुषों के समान ही आदर व सम्मानपूर्वक बैठती है।

भगवती सूत्रानुसार जयन्ती नामक राजकुमारी ने भगवान् महावीर के पास गम्भीर, तात्विक एवं धार्मिक चर्चा की है तो कोशा वेश्या अपने निवास पर स्थित मुनि को सन्मार्ग दिखाती है।

उत्तराध्ययन सूत्र में महारानी कमलावती एक आदर्श श्राविका थी, जिसने राजा इषुकार को सन्मार्ग दिखाया है। महारानी चेलना ने अपने हिंसापरायण महाराज श्रेणिक को अहिंसा का मार्ग दिखाया।

श्रमणोपासिका सुलसा की अड़िग श्रद्धा सतर्कता के विषय में भी हमें विस्मय में रह जाना पड़ता है। अम्बड़ ने उसकी कई प्रकार से परीक्षा ली। ब्रह्मा, विष्णु, महेश बना, तीर्थंकर का रूप धारण कर समवसरण की लीला रच डाली। किन्तु सुलसा को आकृष्ट न कर सका। सुलसा की श्रद्धा देखकर मस्तक श्रद्धावनत हो जाता है। रेवती की भक्ति देवों की भक्ति का भी अतिक्रमण करने वाली थी।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह प्रमाणित हो जाता है कि जैन दर्शन के मस्तक पर नारी तपशील और दिव्य सौन्दर्य के मुकुट की भांति शौभायमान है। उसकी कोमलता में हिमालय की दृढ़ता और सागर की गंभीरता छिपी हुई है। सीता, अन्जना, द्रौपदी, कौशल्या, सुभद्रा आदि महासतियों का जीवन चारित्र आर्य संस्कृति का यशोगान है। इनके संयम, सहिष्णुता एवं विविध आदर्शों को यदि देवदुर्लभ सिद्धि कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी।

ये लब्धियां महाकाल की तूफानी आंधी में भी कभी धूल धूसरित न होगी। वस्तुतः जैनागमों में नारी जीवन की विविध गाथाएं उन नन्हीं दीप शिखाओं की भांति है जो युग-युगान्तर तक आलोक की किरणें विकीर्ण करती रहेगी। यह दीप शिखाएँ दिव्य स्मृति-मंजूषा में जगमगाती रहेगी। वर्तमान परिस्थितियों में यह ज्योति अधिक प्रासंगिक है, क्योंकि आज भी नारी विविध विषमताओं के भयानक डैनों से स्वयं को मुक्त नहीं पा रही है। यदि हम जैन श्रमणियों और आदर्श श्राविकाओं की सुष्ठु एवं ज्योतिर्मय परम्परा को एक बार पुनः समय के पटल पर स्मरण करें तो आने वाले कल का चेहरा न केवल कुसुमादपि कोमल होगा अपितु उसमें हिमालयदपि दृढ़ता का भी समावेश हो जायेगा।

* * * * *

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org